International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN :2581-9925, Impact Factor: 7.555, Volume 07, No. 02(III), April- June, 2025, pp. 69-78

बाणभट्ट के उपन्यास में भौगोलिक परिवेश

अमित कुमार चंदेल*

सहायक आचार्य, शहीद रूपाजी कृपाजी राजकीय महाविद्यालय बेगू, चित्तौड़गढ़, राजस्थान।

*Corresponding Author: amityogi1989@gmail.com

सार

बाण भट्ट सातवीं शताब्दी के संस्कृत गद्यकार और कवि थे। वह राजा हर्षवर्धन के सभा कवि थे। उनके दो प्रमुख ग्रंथ हैं हर्षचरितम्‌ तथा कादम्बरी। हर्षचरितम्‌, राजा हर्षवर्धन का जीवन–चरित्र है कादंबरी विश्व का पहला उपन्यास कादंबरी पूर्ण होने से पहले ही बाणभट्ट का देहान्त हो गया था और इसे उनके पुत्र पुलिनभट्ट ने पूरा किया है। दोनों ग्रंथ संस्कृत साहित्य के महत्त्वपूर्ण ग्रंथ माने जाते है।बाण ने किसी भी कथनीय बात को छोड़ा नहीं जिसके कारण कोई भी पश्चाद्वती लेखक बाण को अतिक्रांत न कर सका। कवि की सर्वतोमुखी प्रतिभा, व्यापक ज्ञान, अद्‌भुत वर्णन शैली और प्रत्येक वर्ण्य–विषय के सूक्ष्मातिसूक्ष्म वर्णन के आधार पर यह सुभाषित प्रचलित किया गया है कि बाण ने किसी वर्णन को अछूता नहीं छोड़ा है और उन्होंने जो कुछ कह दिया, उससे आगे कहने को बहुत कुछ शेष नहीं रह जाता। बाण ने जितनी सुन्दरता, सहृदयता और सूक्ष्मदृष्टि से बाह्य प्रकृति का वर्णन किया है, उतनी ही गहराई से अन्तः प्रकृति और मनोभावों का विश्लेषण किया है। उनके वर्णन इतने व्यापक और सटीक होते हैं, कि पाठक को यह अनुभव होता है कि उन परिस्थितियों में वह भी ऐसा ही सोचता या करता। प्रातः काल वर्णन, सन्ध्यावर्णन, शूद्रकवर्णन, शुकवर्णन, चाण्डालकन्या वर्णन आदि में बाण ने वर्णन ही नहीं किया है, अपितु प्रत्येक वस्तु का सजीव चित्र उपस्थित कर दिया है। चन्द्रापीड को दिये गये शुकनासोपदेश में तो कवि की प्रतिभा का चरमोत्कर्ष परिलक्षित होता है। कवि की लेखनी भावोद्रेक में बहती हुई सी प्रतीत होती है। शुकनासोपदेश में ऐसा प्रतीत होता है मानो सरस्वती साक्षात मूर्तिमती होकर बोल रही हैं।

शब्दकोशः *भौगोलिक परिवेश, जीवन–चरित्र, संस्कृत साहित्य, बाह्य प्रकृति, सहृदयता।*

प्रस्तावना

बाण भट्ट का संस्कृत महाकवियों में का विशिष्ट महत्त्व है। उत्कृष्ट गद्यकाव्यकार के रूप में उन्हें सर्वोच्च स्थान दिया गया हैं। इसके अतिरिक्त, ऐतिहासिक दृष्टि से भी उनको अपूर्व विशेषता प्राप्त है। संस्कृ त इतिहास के वे ऐसे अकेले कलाकार हैं जिनके जीवनवृत्त के विषय में हमें बहुत सी प्रामाणिक जानकारी प्राप्त है, जो प्रायरू उन्हीं के ग्रंथों में उपलब्ध है। हर्षकालीन राजनीतिक और सामाजिक अनेक विषयों के ज्ञान और सूचना देने के कारण हर्षचरित का विशेष महत्त्व है। यह भी पता चलता है कि बाण का काल हर्षवर्धन के शासनकाल ६०६ ई. से ६४६ ई.के आसपास ही माना गया है। उस युग में कवि ने काव्यरचना भी की थी। हर्षचरित के तीन आरंभिक उच्छ्‌वासों तथा कादम्बरी के आरंभिक पद्यों में बाण के वंश और जीवनवृत्त से संबद्ध जो सूचना मिलती है

कादम्बरी में भारत वर्ष की भौगोलिक स्थिति और उसके विकास की प्रवृत्ति का विस्तृत परिचय प्राप्त हुआ है इसमें भौतिक परिवेश के तत्त्वों की प्रबलता एवं मानवीय सामंजस्य की क्षमता के मध्य गतिशील सम्बन्ध और विकसित व्यवस्थाओं का स्थान–स्थान पर वर्णन मिला है। कादम्बरी में भारतीय जीवन दर्शन का

प्रस्तुतीकरण, जीवन दर्शन के प्रति स्पृहणीयता, रमणीयता एवं वरणीयता की गौरवपूर्ण भावना उद्दीप्त होती दिखाई देती है, जो प्रकारान्तर से भौगोलिक परिवेश का ही रूप कही जा सकती है। कादम्बरी में भौगोलिक स्थलों में प्रकृति एवं भूतल में गिरि, सागर, सरोवर,वन–कानन, अटवी,द्वीप, सरिता आदि का पर्याप्त वर्णन उपलब्ध होता है। मानवीय संरचनाओं में नगर, राज्य, देश एवं उनके नगर विन्यास का आकर्षक चित्रण प्राप्त होता है। भौगोलिक जानकारी के साथ–साथ भूतल का विस्तार, उसके खंड, द्वीपों के प्रमुख पर्वत, नदियाँ, वहाँ के शासक, वन्यजीव, दुर्लभजीव, जीवनोपयोगी ओषधियों के विस्तार वर्णन प्राप्त होते हैं। महाकवि वाणभट्ट को देशाटन के समय निकटवर्ती मध्य एशिया एवं उत्तर भारत के विविध क्षेत्रों का पर्याप्त ज्ञान हो गया या जैसे किं पुरुष वर्ष, हेमकूट, सुवर्णपुर, उत्तरकुरु, चन्द्रप्रभ इन सभी का उनकी रचना कादम्बरी में सुविस्तृत वर्णन उपलब्ध होता है। सातवीं शती के पूर्वाद्ध में भारतवर्ष का जो भौगोलिक त्वरूप या उसकी पृष्ठभूमि बाणभट्ट ने कादम्बरी में अपने तरीके से दी है।

- द्वीप– द्वीप चारों ओर सागर, जलाशय अथवा महत्वपूर्ण नदी से घिरे हुए होते हैं। कहीं द्वीप का अर्थ द्वीप समूह से है। जैसे कि शाकद्वीप, कहीं द्वीप का अर्थ प्रायद्वीप से है जैसे कि कुशद्वीप की स्थिति है। शाकद्वीप का मलेशिया प्रायद्वीप है।शाल्मली द्वीप इन दोनों से भिन्न स्थिति वाला तटीय प्रदेश है। जम्बूद्वीप के श्भारतवर्षश एवं श्उत्तरकुरुवर्षश इतने बड़े हैं कि वह स्वयं अपने आप में द्वीप है। साहित्य में सुवर्णद्वीप को सुवर्णभूमि के नाम से भी जाना जाता है पुराणों के अनुसार एक द्वीप से तात्पर्य द्वीप, प्रायद्वीप, दो सारिताओं के मध्य का सजीव प्रदेश अथवा स्वतन्त्र प्रदेश या भूखण्ड हो सकता है। इसके आकार की कोई सीमा नहीं है। प्रत्येक द्वीप का राजा स्वतन्त्र एवं भिन्न लक्षणों वाले प्रदेश का अधिपति होता है। प्रत्येक द्वीप की भौगोलिक स्थिति के साथ–साथ वहाँ की संस्कृति भी अलग होती है। प्राचीन भारत में बहुचर्चित द्वीप शब्द से अर्थ महाद्वीप या विस्तृत क्षेत्र से था जिसकी सम्भवतः निश्चित प्राकृतिक सीमा रही होगी। द्वीपों के अधिकांश भाग को जल से घिरा हुआ माना गया था। सप्तद्वीपों का सम्बन्ध एशिया के निकट के क्षेत्रों से था। प्राचीन काल में भारत के अधिकांश साम्राज्यों एवं गणराज्यों की सीमा सरिता, पर्वत या वनक्षेत्र से होकर गुजरती थी। सिन्धु नदी अति प्राचीन काल से ही भारत एवं अन्य साम्राज्यों की सीमा मानी जाती थी। विन्ध्याचल एवं नर्मदा नदी आर्यावृत्त अथवा उत्तरीभारत का तथा दक्षिण पथ या दक्कन के पठार के मध्य का भाग सीमा क्षेत्र लम्बे समय तक माना जाता रहा।

भारतवर्ष –कादम्बरी में भारत की भौगोलिक सीमा का परिचय देते हुए बाणभट्ट ने लिखा है– पूर्व में उदयाचल, दक्षिण में सेतुबन्ध, पश्चिम में मन्दराचल और उत्तर में गंधमादन तक के सब राजा तारापीड के भुजबल से विजित होकर उसे प्रणाम करने आते हैं अर्थात् पूर्व में उदयगिरी, दक्षिण में समुद्र तक, पश्चिम में मन्दराचल और उत्तर में गन्धमादन पर्वत तक भारतवर्ष का विस्तार था।

एक ओर हिमालय पर्वतमालाओं एवं तीन ओर समुद्र से परिवेष्टित भूमि को भारतवर्ष के नाम से पुकारा गया है। उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिणी समुद्र के मध्य का चापाकर प्रदेश भारत है। इसे भारतखण्ड या भरतक्षेत्र के नाम से भी पुकारा जाता है। दक्षिणी समुद्र को क्षारोद (लवण सागर) या सेतुबन्ध के नाम से भी जाना जाता है। पौराणिक ज्ञान के अनुसार यहीं भारती आर्य नामक मानव समुदाय बसा था। जैसा कि विष्णु पुराण में है–

उत्तर यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चौव दक्षिणम्।
वर्ष तद् भारतं नाम भारती यत्र सन्ततिः ।।

वायु पुराण के अनुसार–

उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमवदक्षिणं च यत।
वर्ष यद् भारतं नाम यत्रेयं भारती प्रजा।।

अभिज्ञान शाकुन्तलम् के अनुसार दुष्यन्त के पुत्र भरत ने इस सम्पूर्ण भूखण्ड को सर्व प्रथम जीतकर एक साम्राज्य सीमा में बांधा। भरत अपने समय के चक्रवर्ती राजा हुये तब भारत को छः उपखण्डों में विभाजित किया गया था। गंगा, सिन्धु बेसिन, उत्तरीभारत आर्यावृत्त से, द्रविड़ जाति विन्ध्याचल से, दक्षिण का भाग दक्षिणपय के नाम से प्रसिद्ध हुआ। आर्यों ने उत्तरीपश्चिमी भारत को सप्तसैंधव प्रदेश के नाम से पुकारा अर्थात् जहाँ सप्तनदी समूह का प्रवाह है। भरतानामधिकृत्य कृतो ग्रन्यो भारतस्तम् के अनुसार भरत नामक राजा भारतवर्ष में निवास करते थे अतः इस भू–भाग का नाम उनके नाम पर हो गया। हर्षचरित के तीसरे श्लोक में कहा गया है सरस्वती नदी से भारतवर्ष पवित्र है

चक्रे पुण्यं सरस्वत्या यो वर्षमिव भारतम्

उत्तर भारतवर्ष के प्रमुख देशों, नगरों का पर्याप्त चित्रण कादम्बरी में प्राप्त हो जाता है जिसमें वहाँ की संस्कृति, जन–जातियों का निवास, पशु–पक्षी वहाँ की भौगोलिक स्थिति के वर्णन किये गये हैं–

किंपुरुषदेश– चन्द्रापीड़ की दिग्विजय में किंपुरुषदेश का नाम आया है। यह देश युधिष्ठिर के राज्य के समीप था उन्होंने अर्जुन जैसे दिग्विजयी के होते हुए भी संकल्प के अभाव में किंपुरुष देश के राज्य को सहन कर लिया। महाभारत सभा पर्व 27/25,28 में उल्लेख आया है कि ऋषिकों की दिग्विजय के लिये अर्जुन चीन देश तक गये थे। ऋषिकों की विजय से लौटते हुए अर्जुन किंपुरुषदेश में आए।

इसकी दक्षिणी सीमा पर हिमवान या हिमालय पर्वत है। यह परमेश्वर का ही रूप माना गया है। यह देवताओं का निवास एवं मनोहारी प्राकृतिक स्थल है। कैलास श्रेणी एवं मानसरोवर इसी देश में है। यह सम्पूर्ण भारतवर्ष की एक सीमा से दूसरी सीमा तक फैला हुआ था। हिमालय की भाँति यह भी हिममण्डित है। सम्भवतः कराकोरम एवं कुनलुन पर्वत ही हेमकूट पर्वत है एवं तितका पार एवं निवर्ती भाग किंपुरुषवर्ष है। यह अधिक जटिल संरचना वाला सबसे पवित्र एवं शान्त क्षेत्र बताया

- **उत्तरकुरुः** यह संसार के जौ प्रदेशों में से एक था। यह गैस के उत्तरी भाग में विद्यमान या अनेक कवियों ने इसका वर्णन किया है। किरातार्जुनीयं में इसका उल्लेख आया है–विजित्य यः प्राज्यमयपशुतरान् कुरुनकुप्यं वसु वासवोपमः।

इस प्रदेश में स्वर्ण–रजत का प्रभूत भण्डार था। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार हिमालय के उत्तर में कुरु प्रदेश था। इस प्राचीन प्रदेश का भू–भाग कश्मीर तथा तिब्बत का प्रदेश रहा होगा। महाकवि भास ने भी अपने नाटकों में उत्तरकुरु शब्द का प्रयोग किया है– प्राक् सन्ध्या कुरुपूत्तरेषु गमिता।

पारसीक देश

उत्तर पश्चिम में सासानी युग का ईरान देश पारसीकों का देश कहलाता था जिसका उल्लेख रघुवंश में कालिदास ने तथा कादम्बरी में बाणभट्ट ने किया है। यहाँ के राजा ने इन्द्रायुध नामक अश्व चमत्कारी प्रभाव के कारण राजा तारापीड़ को भेंट में भेजा था। राजाओं में उपहारों का आदान–प्रदान होता था उसमें अश्व भी दिये जाते थे हर्षचरित से ज्ञात होता है कि हर्ष की राजमन्दुरा में पारसीक देश (सासानी ईरान) के अश्व थे।

- **सुवर्णपुरः** चन्द्रापीड़ ने दिग्विजय में पहले पूर्व फिर पश्चिम दिशा में विजय करते हुए तीन वर्ष में अशेषद्वीपान्तरयुक्त समस्त पृथ्वी मण्डल को व्याप्त कर लिया था। उसने पृथ्वी की प्रदक्षिणा करके कैलाश के समीप हेमकूट में निवास करने वाले किरातों के सुवर्णपुर नामक नगर में जाकर उसे जीतकर अपने वश में कर लिया था सुवर्णपुर सीमान्तलेखा पृथिव्याः सर्वजनपदानाम्।

यहाँ पृथ्वी शब्द से तात्पर्य भारतवर्ष से है। भारत के सभी जन पदों की सीमा सुवर्णपुर है उससे आगे निर्जन वन है, उसे पार करने पर कैलास पर्वत आता है।

- **चन्द्रप्रभः** उत्तर में अच्छोद सरोवर के पश्चिमी किनारे पर कैलास की तलहटी में चन्द्रप्रभ नामक स्थान था। उसकी समतल भूमि पर बना हुआ भगवान शिव का एक शून्यमन्दिर (सिद्धायतन) था जो चारों ओर अनेक वृक्षों से घिरा हुआ था।

भारत वर्ष के उत्तर में किम्पुरुष नामक वर्ष के अन्तर्गत हेमकूट नाम का जो वर्षपर्वत है वहीं कादम्बरी के पिता चित्ररथ नामक गंधर्व का निवास है उन्होंने ही चौत्ररथ नामक सुन्दर वन और अच्छोद नामक महासरोवर बनवाया था और वहीं शिवलिंग की प्रतिष्ठा कराई थी। हेमकूट का बड़ा ही रमणीय वर्णन कादम्बरी में प्राप्त होता है वही किंपुरुष देश को अनेक कुतूहलों से भरा कहा गया है, गन्धर्वलोक भी सुन्दर वर्णित किया गया है।

चंद्रापीड़ की दिग्विजय यात्रा में उत्तर दिशा के भू–भागों की भौगोलिक स्थिति का ज्ञान हो जाता है। सुवर्णपुर को पृथ्वी के देशों की उत्तर दिशा में स्थित अन्तिम सीमा रेखा बताया गया है। उसके पीछे निर्जन वन एवं उसके दूसरी पार कैलास पर्वत की स्थिति बताई गई है। जहाँ चन्द्रापीड़ को किन्नर–जोड़े के दर्शन हुए उन्हीं का गमन करते हुए वह अच्छोद सरोवर के समीप पहुँचा। वहाँ सुवर्णपुर की धरती वन्य हस्तिगण के दन्त द्वारा चूर्णित मैनःसिल की धूल से पिङ्गल वर्ण हो गयी थी, पिघलते गुग्गुल वृक्ष के रस से प्रस्तर आर्द्र हो गये थे, चोटी से गिरते शिलाजीत के रस से शिलाएं चिकनी हो गई थी। मूषकों के नखों से खोदे गए बिलों के अन्दर सुवर्णरज फैली हुई थी, वन–मानुष के जोड़े वहाँ की पर्वतीय गुफाओं में रहते थे। चमर, कस्तूरी रंकु और रल्लक मृगों के गिरे हुए रोमों से वह स्थान व्याप्त था।

अच्छोद सरोवर

अच्छोद सरोवर के तट पर महाश्वेता से चन्द्रापीड़ की भेंट हुई उसके बाद वे दोनों हेमकूट पर्वत गये। अच्छोद सरोवर सरसवारिपूर्ण अतिपुण्यवाला है,ऐसा पुराणों में सुना जाता है इसी के किनारे सिद्धमन्दिर स्थित है जहाँ भवानीपति की मूर्ति है। कादम्बरी के अनुसार वैशम्पायन उस रमणीय स्थल को निहारकर भूमि पर बैठकर अन्तरात्मा में कुछ स्मरण करता चुपचाप सिर नीचाकर बैठ गया था।

नगर प्रदेशादि

व्यापारिक एवं धार्मिक नगरी जो कि बहुत समय तक अवन्ति प्रदेश की राजधानी रही है। क्षिप्रा नदी के तट पर स्थित यह विद्या तथा संस्कृति का प्रसिद्ध केन्द्र रही है। इसी को विशाला भी कहते हैं यहाँ महाकालेश्वरनामक शिवलिंग है। यह प्रसिद्ध कवानायक उदयन की राजधानी रही है। विद्वानों ने उज्जयिनी से कालिदास का अभीष्ट सम्बन्ध स्वीकार किया है। अमरकोश के अनुसार उस युग में आर्यावर्त को पुण्य भूमि कहा जाता था। उसका धर्म–अर्थ–काममय सार उज्जयिनी बी– पुण्यचरित, धनधान्य कामप्रचित यशः। जिस वस्तु की मांग करो उस नगरी में वह सर्व सुलभ था।

अवन्ति प्रदेश

यह प्राचीन भारत का व्यस्त व्यापारिक शिक्षा का महानकेन्द्र रहा है। इसी को अवन्ति पुरी तथा विशाला भी कहा गया है इसे मालवा राज्य भी कहा जाता है। यह भारत के प्रमुख महाजनपदों में से एक था। महाभारत के समय में यह प्रदेश नर्मदा के दक्षिण–पश्चिम तक विस्तृत हो गया था।

विदिशा

कादम्बरी के अनुसार शूद्रक नामक राजा विदिशा पर शासन करता था। यह दशार्ण प्रदेश की राजधानी थी यह नगर भिल्सा नाम से भी प्रसिद्ध है। यहाँ के लोग सात्विक प्रवृत्ति के थे, सतयुग मानों वहीं आ बसा था। वेत्रवती नामक नदी से घिरी हुई विदिशा पूर्वी मालवा की राजधानी थी।

दशपुर

कादम्बरी के अनुसार यह उज्जयिनी के निकट मालवा में स्थित था। दिग्विजय यात्रा कर चन्द्रापीड़ की सेना के दशपुर तक आने का उल्लेख कादम्बरी में हुआ है। शिप्रा को पार कर दशपुर जाने का मार्ग था। चन्द्रापीड़ उज्जयिनी से बाहर आकर थोड़ी दूर चलने के बाद शिप्रानदी पार कर दशपुर जाने वाले मार्ग पर चला था।

नगरसंरचना

कादम्बरी में उज्जयिनी का भौगोलिक विवरण देते हुए वहाँ का समृद्ध चित्र प्रस्तुत किया गया है। वह काव्य की आदर्श उज्जयिनी तो है ही साथ ही गुप्त युग के अवन्तिजनपद की राजधानी भी है, जिसे कालिदास मेघदूत में श्श्री विशालाश शविशालाश कहकर वर्णन करते हुए मुग्ध हो गये थे बाणभट्ट के वर्णन में ये दोनों विशेषण मूर्त हो उठे हैं। रोम से चीन तक और सिंहल से मंगोलिया तक फैला हुआ जो त्रिभुवन था उसमें सातवीं शती की उज्जयिनी सर्वत्र विख्यात थी और उसके लिए श्सकलत्रिभुवनललामभूताश विशेषण सर्वथा सार्थक था। लम्बे–चौड़े विस्तार वाली विशाल उज्जयिनी दूसरी पृथ्वी ही जान पड़ती थी। नगरी के चारों ओरजल से भरी हुई गहरी खाई थी। खाई के बाद ऊँवा सुचाचवल परकोटा था। परकोटे के भीतर नगर–विन्यास करने वाले वास्तुविद्याचार्यों ने चौड़े राजमार्ग बनाकर उसे कई भागों में बांट दिया था। इन मार्गों को श्महाविपणिपयश या हाटों के चौड़े रास्ते कहते थे। बाजार में सड़क के दोनों ओर दुकानें थी और उनके पीछे भवन बने हुए थे।

उज्जयिनी में मार्गों का जाल विध्छा हुआ था। मुख्य मार्गो पर पण्य–शालाएँ होती थी। इन्हीं के निकट राजपुरुषों के धवलभवन भी निर्मित होते थे। राजपुरुषों के भवनों वाले मार्ग को श्राजवीचीश कहते थे। इन धवल भवनों की पंक्तियों की समाप्ति पर मुख्य बाजार आता था यह अन्तर्राष्ट्रीय बाजार था, जहाँ पर देश–विदेश के व्यापारी वस्तुओं का क्रय–विक्रय करने आते थे।

पुरातात्विक एवं साहित्यिक दोनों साक्ष्यों से कादम्बरी काल में निर्मित मन्दिरों, गृहों, नगरों, धर्मशालाओं, विहारों, भव्यप्रसादों का प्रमाण मिलता है। लौकिक स्थापत्य में भव्यमहल उस युग के वैभव ऐश्वर्य के जीवन्त प्रतीक कहे जा सकते हैं। इसमें भवन के बर्हिद्वार, विभिन्न प्रकोष्ठ, सोपान, संगीतशाला, गृह–फलक तथा वातायन आदि का मूर्तिमान स्वरूप मिलता है। साथ ही तत्कालिन प्रासादों (गृहों) की बनावट तथा साज–सज्जा का प्रभावपूर्ण चित्रण भी उपलब्ध होता है।

सरिताएँ

हमारे देश की पवित्र नदियों के प्रति उच्च आग्रह, हार्दिक अनुराग तथा अत्यधिक प्रेम यह प्रदर्शित करता है कि ये सरिताएँ कोई निर्जीव या जलमयी वस्तुएँ नहीं है अपितु कल्याण करने वाली देश की एकता तथा अखण्डता की धौतक है। पर्वतों से निकलने वाली सरिताएँ सम्पूर्ण भारत वर्ष को सिंचती है। ये सरिताएँ कृषकों की कृषि के लिए सेचक, उर्वरक तथा जीवनीय तत्व है। सिंचाई में उपयोगी नहरों के रूप में भी इनकी जलधारा का श्रेय स्वीकार किया गया है। मातृभूमि की भाँति सरिताओं के प्रति मातृभाव की भावना राष्ट्रवासियों के हृदय में विद्यमान है यहाँ जितने भी धार्मिक स्थल, आश्रम, तपोवन है। वे इन सरिताओं के तट पर ही विद्यमान है

गोदावरी

नदियों में सरस्वती, गोदावरी, सरयु, सिन्धु, सतलज और गंगा को पवित्र माना गया है। कादम्बरी में महर्षि अगस्त्य का आश्रम गोदावरी नदी के समीप विद्यमान है जहाँ पूजा, अभिषेक स्नानादि के लिये सरलता से जल उपलब्ध हो जाता है। अगस्त्याश्रम नासिक के उत्तरपूर्व में मनमाड़ से 15 कि.मी. दूर स्थित है वहीं गोदावरी नदी पश्चिमी घाट की उत्तरपूर्वी श्रेणी के पूर्वीढाल पर त्रयम्बकेश्वर से उद्‌भूद होकर बहती है।

गंगा

नदियों में गंगा को पवित्र माना गया है। गंगा का महत्त्व आर्यों के प्रसार के साथ बढ़ा कादम्बरी केउत्तरभाग में मंगलाचरण के छठे श्लोक में गंगा नदी में अन्य नदियों का विलयमान होकर समुद्र तक पहुँचना वर्णित हुआ है। सरिताओं को मानव जीवन का आश्रय स्वीकार किया गया है तथा इनके संगम स्थल को आध्यात्मिक साधना के केन्द्र बताया गया है। ये नदियाँ हमारी राष्ट्रभूमि को सस्य–श्यामला, सुजला, सुफला और अनाविला बनाती रहती है। कादम्बरी में पुण्यसलिला सरिताओं के प्रति निष्ठा के साथ–साथ इनकी आर्थिक उपादेयता और धार्मिक उपयोगिता को भी रोचकपूर्वक अभिव्यक्त करके राष्ट्रवासियों के हृदय में इनके प्रति आदर भावना उत्पन्न कर उनके मनोमस्तिष्क से रागात्मक सम्बन्ध जोड़ा गया है।

शिप्रा

उज्जयिनी में महाकाल शिप्रा नदी के तट पर स्थित है वहींश अवन्ति देवी का मन्दिर है। पुण्य सलिला शिप्रा मालवांचल की मोक्षदायिनी गंगा है जिसके तट पर 12 वर्षों में विश्व प्रसिद्ध अमृत महाप्रसंग (सिहस्थ) कुम्भमेला आयोजित होता है। इस नदी में जो अमृत की बूंदे छलकी थी, आज तक अमृतधारा बनकर बह रही है। इसमें स्नान करना अनेक जन्मों के पुण्योदय का फल है।

पर्वत

प्रकृति ने इस देश को एक सुन्दर और स्वाभाविक सीमा प्रदान की है। यह सीमा भारतवर्ष को सुरक्षा तो प्रदान करती ही है। साथ में राष्ट्रीय एकत्व की भावना भी प्रतिष्ठित करती है। यह सीमाएँ सागर, सरिता अथवा पर्वतों द्वारा निर्धारित हुई है। उत्तर में हिमालय की हिम–मण्डित पर्वत श्रृंखलाओं ने इस राष्ट्र को सुरक्षित सीमा प्रदान की है। हिमालय की ये विशाल शृंखलाएँ पश्चिम और दक्षिण में घूमकर अरबसागर और बंगाल की खाड़ी तक चली गई है। यहाँ से उद्बुद्ध होती सरिताएँ सम्पूर्ण उत्तर भारत को सिंचती है।

पर्वत से प्रभूत वनस्पति, रोगनाशक ओषधियाँ, खनिज सम्पदाएँ राष्ट्र को प्राप्त होती है। अभीष्ट जलवृष्टि कराने वाले, आनन्दायक, सुखकारी, पवित्र पर्वत मानव जीवनोपयोगी है। इन पर्वतों में उत्पन्न शिलाजीत ओषधि क्षयरोगनाशक है।

कादम्बरी में महेन्द्र, मलय, विन्ध्याचल, सह्य, शुक्तिमान, ऋक्ष, पारियात्र गन्धमादन, माल्यवान, त्रिकूटादि पर्वतों का नामोल्लेख किया गया है।

गन्धमादन–माल्यवान पर्वत

उत्तर में स्थित यह पर्वत सुमेरु पर्वत के समीप है ये दोनों ही पर्वत मेरु से दोनों ओर उत्तर दक्षिण दिशा में विस्तृत है। मेरु के मध्यवर्ती भाग की पूर्वी सीमा पर गन्धमादन मध्यवर्ती भाग की ओर माल्यवान है।

रक्षावर्त पर्वत

उत्तर वैदिक काल से वर्तमान काल तक इसे रक्षावर्त के नाम से जाना जाता है।

- **विन्ध्याचल**

यह सतपुड़ा की पहाडियाँ है। सतपुड़ा का वर्णन पुराणों में विशेष रूप से मिलता है। कादम्बरी में उल्लिखित विन्ध्याटवी विन्ध्याचल के सुविस्तृत भाग में ही विद्यमान यी। इसके उत्तर भाग में आटविक राज्य दक्षिण में दण्डकवन महाकान्तार का विस्तार था।

- **त्रिकूट पर्वत**

दक्षिण में स्थित पर्वत, जिसके मध्यभाग में कुट्टाक की टांकी से राम द्वारा लंकापुरी के लूटे जाने की घटना लिखी गई है।

- **उदयगिरि**

विदेशा जिले में स्थित यह पर्वत अशोककालीन गुफाओं के लिये प्रसिद्ध है। इसे श्दसन्नाश भी कहते हैं। यह दक्षिण पश्चिम उत्तरपूर्व दिशा में विस्तृत है।

- **सुमेरुपर्वत**

यह सबसे ऊँचा, उत्तम, पवित्र, सर्वाधिक महत्त्व वाला एवं स्वर्णिम आभावाला पर्वत माना गया है। मेरु पर्वत को सभी प्राचीन ग्रन्थों में जम्बूद्वीप के पर्वत विस्तार क्रम का नाभिकेन्द्र माना गया है। इसके पूर्व में गन्धमादन एवं पश्चिम में माल्यवान पर्वत है। इसकी आकृति कमलदल जैसी है। इसके चारों ओर मन्दर, मेरुमन्दर, सुपार्श्व एवं कुमुद यह चार सहायक पर्वत दस हजार योजन में विस्तृत हैस

- **सुमेरुपर्वत**

यहाँ विशेष उत्सवों पर देवतागण एकत्रित होते थे। पुराणों के अनुसार मेरु के एक भाग में सुर एवं दूसरे भाग में किन्नर निवास करते थे। कादम्बरी में चन्द्रापीड़ द्वारा इसी क्षेत्र में किन्नर–युगल देखे जाने का उल्लेख आया है, देखते ही देखते वह किन्नर युगल चन्द्रापीड़ की आँखों से ओझल हो जाता है।

पवित्र अवसरों पर सुवर्ण के विशाल पवित्र घों से यहाँ जल लाया जाता था। मेरु पर्वत महाद्वीप व्यवस्था तथा जम्बूद्वीप के मध्य स्थित पर्वत पठार पुंज है। जो कि पामीर तथा सन्निकट प्रदेश व्यवस्था एवं धरातल से पूरी तरह मेल खाता है। विष्णु पुराण के अनुसार जम्बूद्वीप सभी द्वीपों के मध्य में स्थित है। इसी के मध्य स्वर्णिम आभा वाला महान मेरु पर्वत है। इसकी आकृति, सप्तदल, अष्टदल एवं सहस्त्रदल कमल की भाँति मानी गई है। इसकी चारों दिशाओं में सप्त स्वर्गीय (ऊँचे शिखरों वाली) पर्वत श्रेणियाँ फैली हुई है और कर्णिका पर्वत विस्तृत है। हर्षचरितम के तृतीय उच्छवास में इसका नामोल्लेख है।

- **कैलाश पर्वत**

गंगोत्री के उत्तरपूर्व में गढ़वाल हिमालय से संयुक्त पर्वत श्रृंखला जो कि मानसरोवर से सम्बद्ध है वहीं कैलाश पर्वत है। कैलाशपर्वत का प्रारम्भ से ही शिव से सम्बन्ध रहा है उसे भगवान शिव की चरणधूलि से पवित्र कहा गया है– कैलासमिव पशुपतिचरण रजः पवित्रित ।

बाणभट्ट ने इसे पर्वताधिराज तथा कालिदास ने नगाधिराज कहा है। महाभारत के वनपर्व में कैलाश, मानसरोवर एवं निकट के प्रदेशों को शुतुद्री, सिन्धु एवं गंगा नदी का उद्गम क्षेत्र माना है। पुराणों के अनुसार कैलाश पर्वत क्षेत्र की कन्दराओं में किन्नरजातियाँ रहती थी। पुराणों में कैलाश मुख्य पर्वत एवं शिखर का नाम था जो कि सर्वोच्च था।

- **श्री पर्वत**

आन्ध्र प्रदेश के गुण्टूर जिले में स्थित यह पर्वत छठी सातवीं शताब्दी में तन्त्र, मन्त्र और अनेक चमत्कारों का केन्द्र माना जाता था। दूर–दूर से लोग अपनी मनोकामना पूर्ण करने के लिये श्री पर्वत आते थे।

सकलप्रणयिमनोरथसिद्धिः श्री पर्वत।

यह वामचारियों और कापालिकों की साधना भूमि है

यहाँ वैष्णव तान्त्रिक साधना केन्द्र भी है। बाणभट्ट के समय में श्री पर्वत महाश्चर्यकारी सिद्धियों की खान माना जाता था। वहाँ बुद्धे द्रविड़ पुजारी अपनी सिद्धियों के लिये पूजे जाते थे। कादम्बरी में जरद् द्रविड़ धार्मिक को श्रीपर्वत से सम्बन्धित अचम्भों भरी बातों का जानकार कहा गया है।

श्रीपर्वताश्वर्य सहस्राभिज्ञेन जरद्रविड धार्मिकेन। यहाँ द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक मल्लिकार्जुन नामक

- **चिन्तामणि पर्वत**

हर्षचरितम् के अनुसार यह सभी प्रकार के मनोरथों को सिद्ध करता था – मनोरथसंपादकचिन्तामणिपर्वतं।

- **पारियात्रपर्वत**

हर्षचरितम् के अनुसार मालवा प्रदेश तक हर्ष का राज्य हो गया था। उसकी सीमा इस पर्वत तक थी। इस प्रदेश में मुकाबले के लिये कोई दिखता ही नहीं, अदृश्यमानप्रतिहारे पारियात्रे यात्रेव शिथिला।৮ हर्ष के इस कथन में पारियात्र पर्वत का नामोल्लेख हुआ है।

- **महेन्द्रगिरि**

दक्षिणी समुद्र की हवाएं दर्दुर पर्वत तक पहुँचकर उसकी गुफाओं को सुगन्धित करती है। दर्दुर के निकट ही मलयाचल है। मलयाचल से मिलता हुआ महेन्द्रगिरि है जहाँ हिलती हुई चन्दन लताओं की सौरभ भरी रहती है।

- **हिमवन्त या हेमालय**

यह हिमालय के ही प्राचीन नाम है। इसकी स्थिति भारतवर्ष के उत्तर में है। इसका वर्णन ऋग्वेद एवं बाद के सभी प्राचीन ग्रन्थों में विस्तार के साथ मिलता है। मार्कण्डेय, भागवत एवं मत्स्य पुराणों के अनुसार यह पर्वत जम्बूदीप के दक्षिण का वर्षपर्वत है इसके दोनों ओर सिन्धु एवं ब्रह्मपुत्र की स्थिति है। इसके हेमवत, हिमद, हिमद्दल, हिमाद्रि आदि नाम ऋग्वेद, अथर्ववेद एवं पुराणों में मिलते हैं। वायुपुराण एवं महाभारत ने कैलाशश्रेणी को हिमालय का ही अंग माना है।

- **हेमकूट**

भौगालिक दृष्टि से इसकी स्थिति चीन देश के पार थी यहाँ गन्धर्वो का वास था। राजसूय यज्ञ के समय अर्जुन ने चीन देश को पार करके हेमकूट पर्वत पर गन्धर्वो को जीत लिया था। ष्पाण्डवः सव्यसाचीचीनविशयमतिक्रम्य राजसूयसंपद कच्यद्गन्धर्वधनुष्कोटिटंकारकुजित कुंर्ज हेमकूट पर्वतं पराजैष्ट।

अर्जुन दिग्विजय के लिये चीन देश तक गये थे वहाँ से किं पुरुष देश में आकर हाटक देश गये। जहाँ मानसरोवर था। हाटक देश तिब्बत का ही एक भाग या और वहीं हेमकूट पर्वत था। महाभारत में यद्यपि हेमकूट का नामोल्लेख नहीं है किन्तु बाणभट्ट ने महाभारतीय भूगोल का स्पष्टीकरण करते हुए उसका उल्लेख किया हैं।

हिमालय से अभिन्न तथा कैलाश से सम्बद्ध उन्नतपर्वतमाला जिसे पूँछ श्रृंखला भी कहा जाता है यह सम्पूर्ण भाग हिन्दुकुश पर्वत के धरातल का अंग बन जाता है।

- **विन्ध्याटवी**

मनुस्मृति में मध्यप्रदेश की स्थिति निम्न प्रकार बताई गई है–

हिमवद्विन्ध्ययोर्मध्यं यत्प्राग्विनशनादपि। प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्तितः ।। 2/21

हिमालय और विन्ध्याचल के मध्य में, सरस्वती के पूर्व में और प्रयाग के पश्चिम में स्थित देश का नाम मध्यदेश है यहीं पर विन्ध्याटवी थी जो मध्यदेश की अलंकार स्वरूप थी। बाण ने उसका भौगोलिक परिचय देते हुए कहा है–

अस्ति पूर्वापरजलनिधिवेलावनलग्ना मध्यदेशालंकारभूता मेखलेवभुवः

- **पवित्रा विन्ध्याटवी नाम।**

अर्थात् पूर्व समुद्रतट से पश्चिम समुद्र तट तक विस्तृत, मध्यदेश की आभूषण स्वरूप वह विन्ध्याटवी थी, जो वनों से परिवेष्टित, कुरर नामक पक्षियों से युक्त, तमालपत्रों की सुगन्ध से सुवासित, रक्तपल्लव समूहों से आच्छादित, अनेक प्रकार के पशु–पक्षी, सर्प, सिंह व्याघ्र, गैंडे, खरगोश, मयूर, महिष, उल्लूक, चमरीमृग, रीछ, हाथी, कस्तूरीमृग, शूकर, कोकिल, शाखामृग, नारियल, केवड़ा, करील, मोलश्री, कङ्कोल, इलायची, नागरखेल, लवङ्ग, लोध्र, चन्दन, अगरु, शमी, पलाश आदि विविध वनस्पतियों से युक्त थी।

विन्ध्याटवी वर्णन को पढ़कर मध्यभारत की भू–सम्पदा पशु–पक्षी, वनस्पति इत्यादि का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। उसी विन्ध्याटवी में दण्डवन के मध्यवर्ती अगस्त्य मुनिका आश्रम था। आश्रम के समीप ही पम्पा सरोवर था जो सघन वन श्रेणियों और तमाल वृक्षों से अन्धकारमय जान पड़ता था। उसी सरोवर के पश्चिमी किनारे पर बहुत पुराना शाल्मली (सैमल) का वृक्ष था, जहाँ वैशम्पायन शुक का जन्म हुआ। जिसे पंजरबद्ध कर चाण्डाल कन्या भाद्रक के राजदरबार में लाई वहीं उसने अपने पूर्वजन्म की कथा सुनाना प्रारम्भ किया जिसका प्रारम्भ विन्ध्याटवी वर्णन से हुआ।

प्राचीन भूगोल में विन्ध्याटवी उस सघन वन की संज्ञा थी जो विन्ध्य पर्वत के उत्तर में चम्बल और बेतवा के मध्य में पड़ता है। महाभारत वनपर्व में इसे घोर अटवी, दारुणअटवी, महारण्य, महाघोरवन कहा गया है जिसमें एक ऊँचा पहाड़ भी था यहीं के राजा आटविक कहलाते थे। एक समय था जब शबर या सौर जाति विन्ध्याचल के जंगलों में बहुतायत में थी। महाकौशल और कलिंग प्रदेश तक उनका विस्तार था यह सारा प्रदेश शबरों के

अधीन था विन्ध्याटवी का पश्चिमी भाग दण्डक और पूर्वीभाग महाकान्तार कहलाता था जैसाकि कादम्बरी में उल्लेख है।

चन्द्रापीड़ की दिग्विजय में आये उत्तर क्षेत्र के भू–भागों के वर्णन कादम्बरी में बड़े ही अभिनिवेश के साथ प्रस्तुत किये गये हैं। उन भौगोलिक स्थलों के प्रति वहां के निवासियों में आस्था और प्रेम का आत्मीयता व श्रद्धा का भाव दिखाई देता है। वहाँ की प्राकृतिक शोभा एवं प्राकृतिक सम्पदा का ऐसा मनोहारी चित्रण किया गया है जिसे पढ़कर प्रत्येक भारतीय के हृदय में स्वेदशानुराग और गौख के भाव उदित हो उठते हैं।

उनकी कृति कादम्बरी में हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक कम्बोज से कलिंग तक फैले हुए इस विशाल भू–भाग के कण–कण से हम परिचित तो होते ही हैं साथ ही हमारी सांस्कृतिक चेतना भी उद्‌बुद्ध होती है जो हमें राष्ट्र की गरिमा से गौरवान्वित होने का अवसर प्रदान करती है, यहाँ के भौगोलिक, ऐतिहासिक, धार्मिक स्थलों के प्रति हमें आकृष्ट करती है।

बाणभट्ट ने विन्ध्यावटी, पंचवटी, अगस्त्याश्रम, शाल्मली वृक्ष, पम्पासरोवर का चित्ताकर्षक वर्णन कर भारत भूमि के प्रति आस्था व्यक्त की है जो भारतवासियों में भौगोलिक एकता बनाये रखने में सहायक है। वहीं मातृभूमि व मातृभाषा के प्रति गौरवानुभूति के भाव जागृत किये गये हैं। विविध ज्ञान, विज्ञान, अध्यात्मदर्शन आदि के क्षेत्र में संस्कृत भाषाकी गुरुता को प्रतिपादित किया गया है। सरिताओं, पर्वतों के प्रति आस्था प्रकट की गई है। इन्हें सुख, ऐश्वर्य, कल्याण, आनन्द एवं नैरुज्य प्रदान कारक माना गया है।

कादम्बरी की भौगोलिक स्थिति का समग्र परिशीलन करने पर विन्ध्याटवी, वहाँ रहने वाली किरात् किन्नर आदि जातियों का यथासम्भव स्पष्ट वर्णन मिलता है। भारतवर्ष के प्रमुख जनपदों यथा उज्जयिनी, विदिशा, अवन्ति, दशपुर इत्यादि की समृद्धियों का वर्णन किया गया है।

पर्वत जैसे प्राकृतिक तथ्यों के आधार पर नामकरण जैसे विन्ध्याचल के आधार पर विन्ध्याटवी का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है।

राजा शूद्रक के काल से चन्द्रापीड़ काल का ज्ञान एवं क्षेत्रीय जानकारी को भी भौगोलिक परिवेश में सम्मिलित किया गया है। उनके शासनकाल में निरन्तर भौगोलिक विकास–विस्तार होता रहा। ये गुणगाह्य एवं विशाल साम्राज्य के प्रभावशाली शासक थे। चन्द्रापीड़ की दिग्विजय यात्रा में उत्तर भारत के विभिन्न क्षेत्रों की जानकारी वहाँ की संस्कृति, वहाँ निवास करने वाली दुर्लभ जातियों, जीवों, वनस्पतियों का विवरण प्राप्त होता है इस प्रकार कादम्बरी के अध्ययन से बाणभट्ट के देशाटन में हिमालय से दक्षिण भारत की यात्रा के आवश्यक एवं प्रमाणित तथ्य प्राप्त हो जाते हैं जो भौगोलिक एकता बनाये रखने में सहायक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. किरातार्जुनीयम्
2. विष्णु पुराण 2.3.1
3. वायु पुराण 45/75
4. हर्ष चरित श्लोक–3
5. भास श्अविमारकश्
6. चन्द्रापीऽस्य दिग्विजय वृत्तान्तः
7. कादंबरी चन्द्रापीऽस्य दिग्विजय वृत्तान्त
8. कादंबरी चन्द्रापीड़ प्रति महाश्वेता वचनम्
9. कादंबरी किन्नरमिधुनाइप्राप्तौ वर्णन
10. कादंबरी पूर्वार्द्ध उज्जयिनी वर्णन

11. तस्याञ्च दण्डकारण्य–कादम्बरी अगस्त्याश्रम वर्णन
12. कादम्बरी पूर्वार्द्ध किन्नरमिथुनऽप्राप्तौ वर्णन
13. कुमारसम्भवम् 1.1
14. हर्षचरित श्लोक 21
15. कादम्बरी चन्द्रापीड़ दिग्विजय वर्णनम्
16. हर्षचरित सप्तमउच्छवास
17. हर्षचरित सप्तम् उच्छवास
18. कादम्बरी पूर्वार्द्ध चन्द्रापीड़ भवन प्राप्ति वर्णन
19. मनुस्मृति 2/2
20. 20. कादम्बरी विन्ध्याटवी वर्णन

❖◆❖